गुरुमाई चिद्विलासानन्द द्वारा लिखित पुस्तक

अन्तर-शुद्धि के सोपान

उद्धरण ४

भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को योग की जो दूसरी परिभाषा बताई वह है, *योगः कर्मसु कौशलम्*, "कर्मकौशल ही योग है।" इस श्लोक में, अर्जुन से कहा गया कि वह अच्छे या बुरे कर्मों का शिकार हुए बिना योग का पालन करे।

अधिकांश लोग बड़ी प्रबलता से यह दिखाने में लग जाते हैं कि वे कितने सही हैं और दूसरे कितने ग़लत। वे यह सिद्ध करना चाहते हैं कि उनके इरादे कितने नेक हैं और बाकी सभी लोग कितने विनाशकारी हैं या अपना ही उपकार करने वाले हैं। अतः, ऐसे लोगों के कर्म में कोई पवित्रता नहीं होती। वह कर्म, 'मैं तुमसे कहीं अच्छा हूँ' की मनोवृत्ति से दूषित है। क्या तुमने कभी ऐसा कोई कर्म किया है? कर्म अपने आपमें सही हो या ग़लत, अच्छा हो या बुरा, साधारणतः देखा जाए तो लोग अधिकतर अपना पलड़ा भारी रखने की चेष्टा में लगे रहते हैं। क्या इससे कुछ याद आता है? जो लोग ऐसा व्यवहार करते हैं—और अधिकांश लोग करते हैं—वे जंगल के नियम के अनुसार जी रहे हैं। जो सबसे शक्तिशाली है, वही ज़िन्दा रहता है। जो सबसे ऊँची आवाज़ में बोलता है, वही जीतता है। और इसलिए, हो सकता है कि कभी-कभार उनके बहुत-से कर्म ठीक बैठें, फिर भी, तुम यह नहीं कह सकते कि वे योग में प्रतिष्ठित हैं।

कर्मकौशल योग है, याद है? यह कौशल वास्तव में है क्या? अपने तुच्छ अहम् को अपने महान अहम् से, अपनी आत्मा से अलग करने का प्रज्ञान है यह कौशल। यह वह कौशल है जिससे तुम अपने स्वयं के प्रयोजन को स्पष्टतः समझ पाते हो। यह वह कौशल है जिससे तुम यह बता सकते हो कि तुम जो कर्म कर रहे हो वह अपनी वाहवाही करवाने के लिए कर रहे हो या जिस संसार में तुम रह रहे हो उसके हित के लिए कर रहे हो। यह शक्ति है, अपने अन्धकार से संघर्ष करने की और प्रकाश पर अपनी दृष्टि जमाए रखने की। यह क्षमता है प्रलोभनों को दूर रखने की और सत्यनिष्ठा के साथ काम करने की।

निस्सन्देह, तरह-तरह की बाधाएँ तो सिर उठाएँगी ही। यह तो एक प्रकार से प्रकृति का नियम ही है—ज्योंही तुम यह निश्चय करते हो कि तुम हर रोज़ सुबह जल्दी उठोगे और ध्यान करोगे, लाखों आपत्कालीन स्थितियाँ उठ खड़ी होती हैं। यदि तुम योग में दृढ़ नहीं हो तो तुम कभी ऐसी पटुता का, ऐसी सूक्ष्म क्षमता का विकास नहीं कर पाते कि चाहे कुछ भी हो, उन स्थितियों का निवारण कर

अपने सर्वोच्च धर्म का पालन करो। आध्यात्मिक अभ्यासों को करने के लिए ज़बर्दस्त जीवट चाहिए। तुमने जैसा सोचा है, हमेशा सब कुछ वैसा ही नहीं होता। सच तो यह है कि लगभग कभी वैसा नहीं होता। अतः, तुम्हें जागरूक रहना है। तुम अपने सत्कर्मों पर या अपने पुरखों से विरासत में प्राप्त पुण्यों पर निर्भर नहीं रह सकते। तुम्हें केवल अपनी आत्मा पर निर्भर रहना सीखना होगा। इसी कारण तुम योग का अभ्यास करते हो।

एक बहुत अच्छे लेखक ने एक बार कहा, "यदि तुम्हारा जहाज़ तुम तक नहीं आता तो तैरकर तुम उस तक जाओ।" यह है योग को अपने कार्य में उतारना। अधिकांश लोग ऐसा करते नहीं। वे दो कौड़ी की राय देते हैं और बदले में करोड़ों एहसानों की उम्मीदें रखते हैं। वे दयालुता का एक कर्म करते हैं और फिर सोचते हैं कि पूरा ब्रह्माण्ड उनका आभारी क्यों नहीं है? क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि लोग क्या करते हैं और उसके बदले में चाहते क्या हैं, लोग क्या *नहीं* करते और बदले में चाहते क्या हैं? अपने जीवन को स्वर्ग बनाने के लिए कोई भी दीर्घ प्रयत्न नहीं करना चाहता, पर हर कोई यह ज़रूर चाहता है कि दूसरे लोग उसके लिए अपनी क्षमता से ज़्यादा करें। "तुम आए क्यों नहीं? मैंने तुम्हारा इतना इन्तज़ार किया! तुमने मुझे फ़ोन क्यों नहीं किया? तुमने मेरे जन्मदिन पर मुझे पत्र क्यों नहीं लिखा? क्यों? तुमने यह क्यों नहीं किया? तुमने वह क्यों नहीं किया? तुम मुझसे मीठी-मीठी बातें क्यों नहीं करते? बताओ क्यों नहीं करते? तुम कभी मेरे लिए कोई गाना क्यों नहीं गाते?"

ये सब अच्छी-अच्छी बातें हमेशा किसी अन्य को ही करनी चाहिए। कुछ अन्य लोग, जिन्हें बोलचाल की भाषा में "वे" कहा जाता है। वास्तव में, वे जब इतना कर रहे हैं तो उन्हें चाहिए कि "वे" ही इन सब महान सद्‌गुणों का विकास भी कर लें। तुम अपने आपसे कहते हो कि आख़िरकार "वे" ही तो हैं जिन्हें इन सद्‌गुणों की ज़रूरत है, ऐसा नहीं है क्या?

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

गुरुमाई चिद्विलासानन्द, *अन्तर-शुद्धि के सोपान : दिव्य सद्‌गुणों का योग* अध्याय ३ "योग में दृढ़ता," से उद्धृत [चित्‌शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१३], पृ. ४०-५२।